P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-9*(Part-2) December- 2018
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

नागार्जुन कृत 'बलचनमा' में कृषक–संघर्ष

भीमसिंह मीना
सहायक आचार्य,
हिन्दी विभाग,
राजकीय महाविद्यालय,
बामनवास, राज्य, भारत

सारांश

कोई भी अनुभव हवा में नहीं होता और कोई रचना देश कालीन नहीं होती। जितना ही वह ठोस और आत्मीय संदर्भों से जुड़ी होगी, उसके कालजयी होने की संभावनाएँ उतनी ही अधिक होंगी। रचनाकार के पास सतह के पार देखने की दृष्टि होती है जो खण्ड में भी बह्माण्ड का दर्शन कर सकती है। हिन्दी कथा साहित्य में किसान संघर्ष की परम्परा स्वाधीनता से पूर्व के कथा साहित्य में बखूबी देखी जा सकती है। प्रेमचन्द का साहित्य तो ग्राम्य–जीवन–संघर्ष का पयार्य माना जा सकता है। फणीश्वरनाथ रेणु और नागार्जुन का कथा साहित्य ग्राम्य जीवन की विभिन्न समस्याओं, विषमताओं और जटिलताओं आदि का चित्रण करते हुए ग्रामीण लोक जीवन की रीति–नीतियों विश्वासों, रहन–सहन के तरीकों का अत्यन्त स्वाभाविक और जीवंत चित्र प्रस्तुत करके भारत की बहुसंख्यक ग्रामीण जनता की आत्मा से साक्षात्कार करवाता है। पराधीन भारत में किसान का संघर्ष जमींदार से था। हाडतोड़ मेहनत करने के बावजूद वह दो जून की रोटी के लिए मोहताज था। आज हमारे युवा गाँव से शहर और शहर से विदेश जाने की जिद में अपने गाँव से कटते जा रहे हैं। ऐसे में जरूरी है कि नयी पीढ़ी पराधीन भारत के कृषक–जीवन के संघर्षों को स्वर देते नागार्जुन कृत उपन्यास 'बलचनमा' को फिर से पढ़ें और आज स्वाधीन भारत में मौसम की मार और कर्ज में डूबे किसान को खुदकुशी से बचाने की दिशा में सोचें।

मुख्य शब्द : किसान, मजदूर, ग्रामीण, जमींदार, संघर्ष, शोषण।

प्रस्तावना

नागार्जुन का साहित्य–सागर सचमुच ऐसा सागर है जिसमें अगणित भाव–रत्न छिपे हैं। इन्हें 'गहरे पानी पैठ' जितना चाहें उतना निकाल सकते हैं। फिर भी यह अक्षय भण्डार कभी रीता नहीं होगा। किसानों की दुर्दशा ने नागार्जुन के भावुक हृदय पर खासा प्रभाव डाला था और वे बिहार के किसान आन्दोलन में कूद पड़े तथा इस पीड़ित वर्ग के दर्द को अपना दर्द समझ उसे साहित्य में व्यक्त करने लगे। वे कहते हैं–'' हम गरीब किसान के साथ हैं, गरीब मजदूर के साथ हैं, हरिजन के साथ हैं। इनका उद्धार हो, ऐसा हम चाहते हैं। लोगों को खाने पीने को मिले, वह अच्छी तरह से रह सकें। पहले जो था उसमें सब बुरा ही बुरा नहीं, आज जो है, उसमें सब अच्छा ही अच्छा नहीं। जो मानव मात्र के लिए अच्छा है उसे रखो, शेष फेंक दो।''(आलोचना अंक 56–57 पृ.221) शोषण व अन्याय चाहे किसी पर किया जा रहा हो, किसी भी बडी से बडी हस्ती द्वारा किया जा रहा हो, नागार्जुन उसे कभी नहीं बख्शते। उन्होने पीड़ित मानवता को स्वर दिया है और वेदना के जीवंत चित्र उकेरे हैं। 'बलचनमा' में ग्रामीण जीवन की त्रासदी और घुटन का चित्रण स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व का एक महान सत्य है। इसमें एक साधनहीन, ईमानदार, परिश्रमी, कर्तव्यनिष्ठ मजदूर कृषक की जीवन गाथा है। साधन सम्पन्न जमींदार मजदूर किसानों का किस प्रकार शोषण करते हैं, उसकी सच्ची तस्वीर इसमें मिलती है।

अध्ययन का उद्देश्य

युवा पीढ़ी पराधीन भारत में कृषक जीवन के संघर्षो से परिचित हो तथा स्वाधीन भारत में उनके वहतर जीवन की दिशा में कुछ करने के लिए प्रेरित हो। देश का युवा विदेश गमन की बजाय कृषि क्षेत्र में ही उन्नत खेती व नवीन कृषि तकनीकी से किसानों की आमदनी को बढाने का काम करे। भारत कृषि प्रधान देश है। हमारी अर्थव्यवस्था में खेती एवं पशुपालन का बहुत बडा योगदान है लेकिन राजनीतिक इच्छा शक्ति एवं ठोस किसान नीतियों के अभाव में आज किसान आकंठ कर्ज में डूब जाने पर आत्म हत्या करने के लिए विवश है। यदि किसान हित में धरातलीय कार्य नहीं होगा और किसान ने खेती करना छोड दिया तो आने वाले समय में बहुत भयावह स्थितियों का

सामना करना पड़ सकता है। कभी अकाल तो कभी बाढ की मार से अधमरा किसान बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के महँगे खाद, बीज, एवं कीटनाशकों से बेसुध है। खून पसीने से उपजाई फसल के दामों से जब लागत नहीं निकलती है तब वह कभी प्याज तो कभी लहसुन और कभी टमाटर को सड़को पर पटककर अपने आहत मन को हल्का करने का प्रयास करता है। नागार्जुन का 'बलचनमा' किसान जीवन का बेजोड़ नमूना है। इसमें किसान जीवन की वे सभी समस्याएँ है जो आज भी किसी न किसी रूप में हमारे समाज में मौजूद हैं। यद्यपि व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष करते–करते उपन्यास का नायक दम तोड़ देता है लेकिन यह संदेश देने में कामयाब रहता है कि किसान जब तक संगठित, जागरूक एवं जुल्मों के खिलाफ आवाज वुलन्द नहीं करेगा तब तक उसकी स्थिति बदलने वाली नहीं है।

विषय विस्तार

'बलचनमा' में नागार्जुन ग्रामीण जीवन को लेकर केवल ग्रामीण समस्याओं तक ही सीमित नहीं रहे हैं वरन् गाँव की अन्तरात्मा से साक्षात्कार कर ग्रामीण मजदूर–किसानों की पीड़ा को सशक्त स्वर दिया है। जमीदारों के अनैतिक कर्मों को भी उन्होने उजागर किया है। गाँव में जमीदार लोग गरीब किसानों पर बहुत जुल्म करते हैं। बलचनमा कहता है–'' मालिक के दरवाजे पर मेरे बाप को एक खम्भे के सहारे बांध दिया गया है। जांघ, पीठ और बांह सभी पर बांस की हरी कैली के निशान उभर आए हैं। चोट से कहीं–कहीं खाल उधड़ गई है और आँखों से बहती आँसुओं की धार गाल और छाती पर सूखती चली गयी है.....चेहरा काला पड़ गया है। होंठ सूख रहे हैं।''1 इतनी क्रूर सजा का कारण मात्र दो किसुनभोग आम थे, जिन्हें ललचनमा (बलचनमा का बाप) ने मालिक के बाग से तोड़ लिया था। पिता की मृत्यु के पश्चात् बलचनमा के यातनामय जीवन का प्रारम्भ मालिकों के यहाँ चरवाहे रूप में होता है। इस गरीब किसान पुत्र की विडम्बना यह है कि जिस मालिक ने दो किसुनभोग आम के आरोप में उसके बाप की चमड़ी उधेड़ कर रख दी उसी के यहाँ सेवा कार्य के लिए मजबूर होता है। एक अनपढ़, बेसहारा, गरीब, मासूम बालक खेलने खाने के दिनों में दिन–रात मालिक के यहाँ काम में जोत दिया जाता है और वह उफ भी नहीं कर सकता। जी भर कर काम लेने के बाद उसे जीने के लिए 'मडुआ' के अन्न से बनी रोटी, नमक एवं मिर्च से ही संतोष करना पड़ता। कभी–कभी झूठन के रूप में अच्छा खाना बडे अहसान के साथ मिलता। मलिकाइन जब बहुत खुश होती तो सूखा या वासी पकवान, सड़ा आम, फटे दूध का बदबूदार छेना या झूठन की बची हुई कड़बी तरकारी खाने को दे देती उस पर भी तुर्रा यह कि–''बलचनमा, ऐसी अच्छी चीज तेर बाप–दादों ने भी नहीं खाई होगी।''2 गरीबी और अभाव बलचनमा को अहर्निश काम करने के लिए मजबूर करतें है। उसके मालिक और मलिकाइन पैशाची प्रवृत्ति के होते हैं। उनकी दृष्टि हमेशा गरीबों के शोषण पर केन्द्रित रहती है। मालिक की कुदृष्टि बलचनमा के खेतों पर ही नहीं उसकी बहन रेबनी पर भी पड़ी हुई थी।

नागार्जुन इस उपन्यास में यह मत स्थापित करने में कामयाब रहें हैं कि कोई व्यवस्था निष्क्रियता से नहीं, सक्रियता से ही परिवर्तित हो सकती है। शोषण का अन्त कोई दैवीय शक्ति नहीं करेगी, कोई कानून नहीं, सरकार भी नहीं। इसके लिए शोषितों को स्वयं संगठित होकर अपने अधिकारों की लड़ाई स्वंय लड़नी होगी। केवल निरीह बन कर तो शोषकों के दमनचक्र से निकलना संभव नहीं है। इस उपन्यास में जमीदारों की शोषणकारी व्यवस्था एक सहृदय की संवेदना को झकझोर देती है। डॉ. आशुतोष राय लिखते हैं–'' अर्थव्यवस्था के असंतुलित धरातल पर खडे सामाजिक ढाँचे की अमानुषिकता नागार्जुन की यथार्थपरक पकड़ में इस रूप में उजागर होती है कि सहृदय की संवेदना उभरकर बलचनामा की पीड़ा से तादात्म्य स्थापित करती है तथा उच्च वर्ग की करतूतों के प्रति घृणा और इस सड़ी व्यवस्था के प्रति विद्रोह जगाती है।''[3] रेबनी का विवाह और स्वयं के गौने जैसे मांगलिक अवसर भी बलचनमा को खुशी देने की बजाय आर्थिक संकट में डाल देते हैं। छोटे मालिक उसकी बहन की इज्जत के साथ के खेलने के असफल प्रयास से आग बबूला हो उस पर चोरी का झूँठा आरोप लगाकर मुकदमा दर्ज करा देते हैं जिससे उस गरीब पर मुशीबतों का पहाड़ टूट पड़ता है। वह कॉर्ट कचहरी व थाने के डर से मारा–मारा फिरता है। बहुत आशा के साथ फूल बाबू के पास सहायता के लिए जाता है लेकिन वहाँ उसे निराशा ही हाथ लगती है। वे सहायता करने की बजाय वापस शिकार को शिकारी के पास भेजकर माफी माँगने की सलाह देते है। ''जा जाकर अपने मालिक के ही पैर पकड़। वह तुझे माफ कर देंगे।''[4] इस बात से बलचनमा का फूल बाबू से मोहभंग हो जाता है। ''कैसे धोखे में पड़ा हुआ था! मेरा सारा मोह क्षण भर में फट गया। साफ–साफ दीखने लगा कि बाबू–भैया लोग वहीं तक हमारा पक्ष लेंगे, जहाँ तक उनका अपना मतलब रहेगा।''[5] फूल बाबू के इस अप्रत्याशित जबाव से बलचनमा में एक संघर्षी चेतना का उदय होता है। ''सच जानों भैया, उस बखत मेरे मन में यह बात बैठ गयी कि जैसे अँग्रेज बहादुर से सोराज लेने के लिए बाबू–भैया लोग एक हो रहे हैं, हल्ला–गुल्ला और झगड़ा–झंझट मचा रहे हैं, उसी तरह जन–बनिहार, कुली मजदूर और बहिया–खवास लोगों को अपने हक के लिए बाबू भैया से लड़ना पड़ेगा।''[6] वह अपने पर लगाए मिथ्या आरोपों से हार नहीं मानता बल्कि आखिरी दम तक संघर्ष करने की हुँकार भरता है,''बेशक! मैं गरीब हूँ। तेरे पास अपार संपदा है, कुल है, खानदान है, बाप–दादे का नाम है, अड़ोस–पड़ोस को पहचान है, जिला–जवार में मान है और मेरे पास कुछ नहीं। मगर आखिरी दम तक मैं तेरे खिलाफ डटा रहूँगा। अपनी सारी ताकत को तेरे विरोध में लगा दूँगा।''[7]

भूकम्प जैसी प्राकृतिक आपदा में भी कांग्रेस नेता जब रिलीफ फण्ड की राशि अपने सगे–संबंधियों में ही बाँट लेते हैं और गरीब बेचारा देखता ही रह जाता है तब बलचनमा की कॉग्रेस के प्रति यह सोच बनती है कि,''स्वराज मिलने पर बाबू–भैया लोग आपस में ही दही–मछली बाँट लेंगे। जो लोग आज मालिक बन बैठे हैं,

आगे भी तर माल वही उडावेंगे। हम लोगों के हिस्से सीठी ही सीठी पड़ेगी।''[8] भूकम्प के समय सहायता राशि बांटने का काम फूल बाबू को सौपा जाता है और वे देते 30 रुपया हैं और दस्तखत 60 रुपये पर करवाते हैं। इससे बलचनमा का फूल बाबू से बिलकुल मोह भंग हो जाता है और राधा बाबू पर विश्वास बढ़ जाता है। वह कामरेड राधा बाबू का साथी बनकर अपने जीवन की आगे की लड़ाई लड़ता है। वह डाक्टर रहमान और राधा बाबू के साथ जमीदार सादुल्ला खाँ के खिलाफ किसानों और मजदूरों को संगठित कर एक लम्बे संघर्ष की शुरुआत करता है। महपूरा के जमींदार के खिलाफ किसानों के संघर्ष का प्रभाव बलचनमा के गाँव रामपुर वासियों पर भी पड़ता है। ''मेरी भी बस्ति के पन्द्रह–बीस किसान सभा देखने आये थे। किसान सभा की गर्मी रामपुर के लोगों में भी कुछ आने लगी।''[9] रामपुर के जमींदार भी महपूरा जमींदार–खेतीहर संघर्ष की ओर ही निगाहें लगाए बैठे थे। बलचनमा के गाँव में पटना से प्रकाशित होने वाला साप्ताहिक अखबार 'क्रांति' आने लगता है। इसमें किसान और मजदूरों की खबरें खुलकर आती थी। महपूरा के किसानों की बातें भी इसमें छप चुकी थी। बलचनमा, ताराचन्द बाबू, रामखेलौना, तीरी अमात व कभी–कभी चुन्नी भी उस अखबार को ध्यानपूर्वक सुनते थे। इधर मालिक लोग बलचनमा की किसान सभा में सक्रियता से बेखबर नहीं थे। '' माँ को और सुगनी को बारी बारी से बुलवाकर छोटी मलिकाइन ने काफी डाँटा, अगाह कर दिया कि बलचनमा अपनी हरकतों से बाज नहीं आया तो घर फुँकवा दूँगी।''[10]जमींदार किसानों को जमीन से बेदखल करना चाहते हैं लेकिन किसान किसी भी कीमत पर जमीन छोडने को तैयार नहीं। महपूरा में खूनी संघर्ष में एक किसान की जान भी गई। ''अगले अगहन में फसल की जो छीना–झपटी हुई, उसमें एक किसान की लास गिरी थी। गँडासा जिसने मारा था वह खानबहादुर का कोचवान ही था। पुलिस टुकुड़–टुकुड़ ताकती रही और हत्यारा लापता हो गया। उल्टे दफा १४४ को तोड़ने के नाम पर दो–ढाई किसानों की गिरफ्तारी हुई।''[11]

जमींदार खानबहादुर सादुल्ला खाँ के जुल्मों के खिलाफ उस इलाके के किसान एकजुट हो जाते हैं। राधा बाबू और डॉक्टर रहमान महपूरा में एक विशाल किसान सभा का आयोजन करते हैं जिसमें बाहर से भाषण देने के लिए पाँच–छह नेता आए थे। नेताओं के भाषण में पटना से आये स्वामी जी ने कहा–''बाहरी नेताओं के भरोसे मत रहिए, अपना नेता आप खुद बनिए। मँगनी और उधार के नेता पढ़े–लिखे होते हैं और अपढ़–अनजान हैं, लेकिन गेहूँ–चावल, दूध–घी, तिलहन–कपास, सब कुछ आप ही पैदा करते हैं, लीडर लोग तो आपकी ही कमाई का हलवा खाकर लेक्चर देने आते हैं और अपने दिमाग व पेट की बदहजमी मिटाते हैं। आप अपनी अकल से इतना तो जानते ही हैं कि लेक्चर चाहे लाख दे जाय, उनसे न एक दाना चावल पैदा होता है, न गेहूँ और न घी–दूध ही। लेक्चर सुन के भूख प्यास नही मिटती। आप लोग लीडरों से लाख दर्जे अच्छे हैं। आप सब कुछ पैदा करते हैं तो अपना लीडर भी अपने ही यहाँ पैदा कीजिए। जो आपका आदमी होगा, वही आपकी तकलीफों को समझेगा, जाके पाँव न फटी बिवाई सो क्या जाने पीर पराई! ...कॉग्रेस आपका दुख दर्द क्या समझेगी? वह खादी पहना कर और गले में माला डाल कर जमींदारों को जेल भेजने का नाटक करती है। पीछे जेल से निकले वहीं जमींदार कॉंग्रेसी आप लोगों को शान्ति और संतोष का सबक सिखाते फिरते हैं....खबर्दार ! भाईयों, ऐसे लीडरों के फेरे में कभी मत पड़ना...आप अकेले नही हैं, करोडों की तादात है आपकी। आप जब उठ खडे होंगे और एककंठ होकर हुंकार करेंगे तो जालिम जमींदारों का करेजा दहलने लगेगा। वे हैं ही कितने, दाल में नमक के बराबर! अपने बल पर नहीं, सरकारी अफसरों के बल पर ही जुल्म करते हैं।''[12] स्वामी के इस भाषण से किसानों में एक संघर्षी चेतना का संचार होता है। सबके चेहरों पर तेज और आँखों में चमक आ जाती है। स्वामी देर तक बोले थे, किसानों ने दम साध कर सुना। गया से आये नेता शर्मा जी ने किसानों को जमींदारों के चाल–चरित्र से अवगत कराते हुए उनके अमोघ अस्त्र– फूटनीति से सावधान करते हुए कहा–''जमींदार बड़ा पर्पंची, बडा जालिम होता है। अउवल (अव्वल) तो पहले वह तुम्हारे आपस ही में फूट डालने की कोशिश करता होगा, नहीं, तुम सभी एक ओर मजबूत होकर अपनी जमीन पर डटे ही रह गये तो वह पैसे के बल से तंग करेगा। अफसरों से मिलकर वह तुम लोगों को जेल भेजने की कोशिश करेगा। सम्मन, नोटिस, वारंट, सजा सब हो सकता है। मगर खबरदार, अपने खेतों से न हटना।.....अगर तुमने मेरी ये बातें मान लीं और डटे रहने का निश्चय कर लिया तो फिर तुम्हारे खेतों पर से तुम्हें हटाने वाली कोई ताकत इस दुनिया में नहीं है।''[13] शर्मा जी के इस भाषण के बाद खेतीहर नारे लगाते है–''कमाने वाला खायेगा.... इसके चलते जो कुछ हो। इन्किलाब....जिन्दाबाद। जमीन किसकी...जोते–बोये उसकी। अंग्रेजी राज नाश हो। जमींदारी प्रथा नाश हो। किसान सभा जिन्दाबाद। लाल झण्डा....जिन्दाबाद। इन्किलाब...जिन्दाबाद।''[14]

रामपुर गाँव का जमींदार तीस किसानों पर बकाया मालगुजारी का मुकदमा कर देता है। उनके नाम से अदालत का सम्मन आता तो गाँव भर में बिजली दौड़ जाती है। यह किसानों को परेशान करने का एक बहाना था। किसान हर साल लगान देते थे। जमींदार के इस तुगलकी रवैये से किसान परेशान हुए लेकिन सभी पीड़ित किसान डॉ. रहमान के नेतृत्त्व में जमीन नहीं छोडने की कसम खाते हैं। बलचनमा वोलंटियरों का मुखिया बनता है। मालिको के पास रुपया, एस.डी.ओ. और कलक्टर का बल था। उन्होने ऐसी–ऐसी चालें चली कि किसान हिम्मत हार कर बैठ जायें। छोटे मालिक फूल बाबू से कहकर चीनी मिल के मेनेजर से गाँव के बागी किसानों का गन्ना नहीं खरीदने की सिफारिश करवा देते हैं जिससे किसानों के माथे पर चिन्ता की लकीरें खिंच जाती हैं। ''हमारे लिए यह भारी मुसीबत आ रही थी। मेरी तरह बीसों की गन्ने की फसल तैयार खडी थी–काफी अच्छी फसल। साल भर से इस फसल की ओर हम आस लगाये हुए थे। एक–एक किसान ने मनों पसीना सुखाया तब जाकर मीठी घास की ये रसभरी छड़ें तैयार हो सकी थीं। किसी को सौ, किसी को दो सौ, और किसी–किसी

को पाँच–पाँच सौ तक मिलने वाले थे। इन पैसों के बल पर जालिम जमींदार को हम अभी से अँगूठा दिखाने लगे। धान की सैकड़ों मन फसल मिलिटरी के कब्जे में थी और गन्ने की खडी खेती पर इस तरह का संकट मँडरा रहा था।''[15] इधर बलचनमा की जान पर संकट मँडरा रहा था। मालिक की खूनी निगाहें बलचनमा, बच्चू, बंभोल, रामखेलावन और अब्दुल पर टिकी हुई थी। पुलिस भी जमींदारों के इसारे पर इन्हें फँसाना चाहती थी। उपन्यास के अन्त में बलचनमा जमींदार के क्रूर षड्यंत्र का शिकार हो जाता है। वह जालिम जमींदार के सम्मुख समर्पण की बजाय संघर्ष को समर्पित हो जाता है। लेखक भी यहाँ सुधारवादी या आदर्शवादी हल तलाशने के बजाय सामंती व्यवस्था का मूल्यांकन सामाजिक यथार्थ के कठोर धरातल पर करता है। इस अर्थ में नागार्जुन की दृष्टि प्रेमचन्द के आगे की दृष्टि है। डॉ. सुषमा धवन का मत उचित ही है कि–''प्रेमचन्द का दृष्टिकोण सामाजिक यथार्थ की देन है। समाजवादी यथार्थ की दृष्टि से प्रेमचन्द की संवेदना नागार्जुन की रचनाओं में सामाजिक चेतना में परिणत हो जाती है।''[16]

संस्कार–संस्कृति का आदि उत्स गाँव आज उपभोक्तावादी संस्कृति और भौतिकतावाद की अंधी दौड़ में अपने नैसर्गिक रूप को खोता जा रहा है। ग्राम विकास की बडी बडी योजनाएं सियासी छलाव की भेंट चढ़ गई हैं। विकास के नाम पर तमाम नारे खोखले साबित हो रहे है। लड़ाई झगड़ों और वैर विरोध का घुटा हुआ अखाड़ा आज के गाँव का श्रृंगार है। नागार्जुन के बलचनमा का कृषक–संघर्ष आज भी भयावह रूप में उपस्थित है। अब उसका संघर्ष खाद, बीज, कीटनाशक और बिजली के बढ़ते दामों से है। इनके बढ़ते दामों ने किसानों की कमर तोड़ कर रख दी है। कभी खेत खलिहान में काम करने वाली कृषक वधुएं आज दिहाड़ी पर काम करने के लिए शहर के चौराहे पर घण्टों इन्तजार करने के लिए मजबूर हैं। आए दिन किसान आत्महत्या की खबरें अखवारों की सुर्खियाँ बटोरती हैं। मौसम की मार और कर्ज में डूबा किसान मौत को गले लगाने के लिए विवश है। सबके दर्द का इलाज है लेकिन किसान का मर्ज लाइलाज बन गया है। अन्नदाता की खुशी के अभाव में देश की खुशहाली पर सवाल स्वाभाविक है। नागार्जुन का कृषक 'बलचनमा' अब अन्दर से टूट गया है। जमींदारी व्यवस्था में उसका शोषक उसके सामने था लेकिन अब लोकतंत्र में शोषक उसे बहुरुपिया बनकर आए दिन ठग रहा है। व्यवस्थाएँ आती– जाती रहती हैं लेकिन उसके दिन फिरने का नाम नहीं लेते। सियासतों के आश्वासनों से उसे बू आती है। बहु राष्ट्रीय कम्पनियों मकडजाल में उलझा किसान छटपटा रहा है लेकिन उसे मुक्ति की युक्ति नहीं सूझ रही है। दुर्भाग्य है कि नागार्जुन के बलचनमा का कृषक संघर्ष अभी भी जारी है।

निष्कर्ष

बलचनमा केवल जमीदारों के शोषण और अत्याचार की गाथा ही नहीं बल्कि किसान विद्रोह का और उसके संघर्ष की भी गाथा है। गोपाल राय के शब्दों में– '' 'बलचनमा' केवल इसलिए उल्लेखनीय उपन्यास नहीं है कि उसमें कृषक–मजदूरों के अत्याचार और शोषण की सही तस्वीर है, वरन् इसलिए भी कि उसमें नागार्जुन ने जमीदारों से किसानों के संघर्ष की शुरूआत की कहानी लिखी है। प्रेमचंद किसानों की गरीबी, बेकारी और जहालत की कहानी लिख गए थे, पर उनकी मुक्ति की दास्तान वे नहीं कह पाए थे। प्रेमचंद के उपन्यासों में जमींदारों के विरूद्ध किसानों का विद्रोह केवल सांकेतिक होकर रह गया है, वे उसे सही कलात्मक परिणति नहीं प्रदान कर सके है। 'गोदान' का होरी तो खैर विद्रोह करने वाली पीढ़ी का आदमी ही नहीं है पर नई पीढी का गोबर भी इस दृष्टि से उल्लेखनीय पात्र नहीं बन पाया है। लगता है गोदान का गोबर ही बलचनमा के रूप में सही रूप में उभरा है। अपनी आदर्शवादी मनःस्थिति के कारण प्रेमचंद गोबर के चरित्र को यथार्थवादी परिणति नहीं दे पाते, पर बलचनमा का विकास बडे ही स्वाभाविक रूप में होता है।''[17]

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *बलचनमा – नागार्जुन, पृ. 01, किताब महल प्रकाशन, इलाहाबाद, दसवां संस्करण, 2000*
2. *वही पृ. 05*
3. *नागार्जुन का गद्य साहित्य – डॉ. आशुतोष राय, पृ. 47, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2006*
4. *वही पृ. 71*
5. *वही पृ. 71*
6. *वही पृ. 71*
7. *वही पृ. 61*
8. *वही पृ. 119*
9. *वही पृ. 131*
10. *वही पृ. 142*
11. *वही पृ. 131*
12. *वही पृ. 128*
13. *वही पृ. 129–30*
14. *वही पृ. 130*
15. *वही पृ. 143*
16. *हिन्दी उपन्यास – डॉ. सुषमा धवन, पृ. 133–335*
17. *आधुनिक हिन्दी उपन्यास 1, संपादक –भीष्म साहनी, रामजी मिश्र, भगवती प्रसाद निदारिया, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ – 67*